International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 29-06-2025, Accepted: 28-07-2025, Published: 16-08-2025
Volume 11, Issue 4, 2025, Page No. 115-119

गांधी के विचारों पर भारतीय धर्म दर्शन का प्रभाव और जीवन काल में महत्व

सुनिता मौर्य[1], डॉ अफरोज अहमद[2]
[1] शोद्यार्थी, राजनीतिक विज्ञान विभाग, आरएनबी ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर, राजस्थान, भारत
[2] सहायक प्रोफेसर, राजनीतिक विज्ञान विभाग, आरएनबी ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर, राजस्थान, भारत

सारांश
मोहनदास करमचन्द गांधी जी का जन्म संवत् 1925 की भादों बारस के दिन, अर्थात 2 अक्टूबर 1969 को काठियावाड़ के पोरबन्दर अथवा सुदामापुरी नामक स्थान पर एक सम्पन्न गुजराती परिवार में हुआ था। इनकी माता धार्मिक प्रवृत्ति वाली एक उदार महिला थीं। उनकी धार्मिक मनोवृत्ति का सम्पूर्ण परिवार पर प्रभाव पड़ा। गांधी जी के व्यक्तित्व निर्माण में भी परिवार व समाज की महत्वपूर्ण भूमिका थी । उनके नैतिक विचारों का निर्माण बचपन में ही प्रारम्भ हो गया था ।गांधी जी ने सत्य, अहिंसा, परोपकार, सेवा, त्याग, इत्यादि सद्गुणों को भी अपने परिवार से सिखा । उनके पिता जी स्वयं कुटुम्ब – प्रेमी, सत्य प्रिय, शूर, आदि थे, जिसका प्रभाव गांधी जी पर बचपन में पड़ा। श्हरिश्चन्द्रश् और श्श्रवण–पितृभक्तिश् नामक नाटक ने उनके मन में माता–पिता के प्रति अखंड श्रद्धा, भक्ति तथा सेवा की भावना को उत्पन्न किया । गांधी जी ने अपने जीवन में जिन नैतिक सिद्धान्तों को महत्व प्रदान किया और समाज में आजीवन जिस नैतिक विचारों का प्रचार किया, उन सब की मूल शिक्षा उन्हें अपने परिवार से ही मिली थी। अतः कहा जा सकता है कि उनके नैतिक दर्शन में पारिवारिक एवं सामाजिक वातावरण की विशेष भूमिका रही है । इसी प्रकार गांधी जी ने सर्वधर्म समभाव की शिक्षा भी अपने पारिवारिक वातावरण से ही प्राप्त की।

मूलशब्द: नैतिक विचारए नैतिक दर्शनए धर्म दर्शन

प्रस्तावना
गांधी जी पर भारतीय धर्म दर्शन का विशेष प्रभाव पड़ा है। गांधी जी ने हिन्दू धर्म के अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अध्ययन किया था। इनमें से उपनिषदों, गीता, रामायण तथा महाभारत, का उनके जीवन काल में विशेष महत्व रहा है, और उन पर इनका स्पष्ट प्रभाव भी दिखता है।

उपनिषदों का प्रभाव
गांधी जी ने अंग्रेजी अनुवादों की सहायता से ही हिन्दू धर्म के अनेक ग्रन्थों का अध्ययन किया था। गांधी जी अपने अधिकतर नैतिक सिद्धान्तों एवं आदर्शों को हिन्दू ग्रन्थों से ही ग्रहण किया था। उनके नैतिक दर्शन का पूर्ण विकास भी अनेक भारतीय तथा प्राश्चात्य ग्रन्थों के अध्ययन तथा अपने अनुभवों के फलस्वरूप ही हुआ था । उपनिषदों का अध्ययन गांधी जी ने श्थियोसोफिकल सोसाइटी द्वारा प्रकाशित उपनिषदों के अग्रेजीं अनुबाद की सहायता से किया था। उन्होंने पर्याप्त समय तक उपनिषदों के विचारों एवं सिद्धान्तों पर चिन्तन करने के पश्चात, इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि उपनिषदों में हिन्दू धर्म तथा दर्शन का सार तत्व निहित है। और इसी कारण वे उनके प्रति विशेष श्रद्धा रखते थे और कुछ अंशों का प्रति दिन पाठ भी किया करते थे।
इतना ही नहीं, वे उपनिषदों के अनेक वाक्यों को अक्षरशः सत्य मानते थे और सभी को उनके अनुसार आचरण करने का उपदेश भी देते थे। उदाहरणार्थ गांधी जी ईशोपनिषद् के निम्नलिखित प्रथम मंत्र से अत्यधिक प्रभावित हुए थे।

'ईशावास्यमिदं सर्व यत् किंचिद् जगत्यांजगत्, तेन व्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्'
अर्थात जगत में जो कुछ हैं वह ईश्वर द्वारा ही व्याप्त है, इसलिए जगत के प्रति त्याग भावना रखकर तू यथा प्राप्त भोगता जा, किसी के धन के प्रति लालच न कर।श् इस मंत्र का गांधी जी पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि उन्होंने इसे हिन्दू धर्म का ही नहीं, अपितु सभी धर्मो का सर्वस्व माना और यह कहा कि मानव जीवन की उन्नति के लिए इसकी अपेक्षा अधिक उत्कृष्ट उपदेश अन्य किसी धर्म में उपलब्ध नहीं होता । गांधी जी का विचार है कि यह मंत्र सभी मनुष्यों को भ्रातृत्व तथा सब जीवों की समानता की शिक्षा देता है, क्योंकि यदि ईश्वर सर्वव्यापक है और उसी ने सभी जीवों को उत्पन्न किया है। तो परस्पर शत्रुता तथा ऊँच नीच की भावना रखना पाप है। इसी प्रकार यह मंत्र मानव को त्याग पूर्वक सुखभोग करने का अमूल्य उपदेश देता है। यह मंत्र मनुष्य को लोभ से मुक्त रहने अर्थात किसी प्रकार का संचय न करने की शिक्षा भी देता है ।
इस मंत्र की महत्ता को स्वीकार करते हुए गांधी जी ने लिखा भी है कि मैं इसी निष्कर्ष पर पहूँचा हूँ कि यदि सभी उपनिषदों तथा अन्य समस्त धर्मग्रन्थ सहसा नष्ट हो जायें और यदि हिन्दुओं की स्मृति में ईशोपनिषद् का प्रथम मंत्र ही शेष बचा रहे तो हिन्दू धर्म सदा के लिए सुरक्षित रहेगा । कि गांधी जी मतानुसार उपनिषदों सहित हिन्दू धर्म समस्त ग्रन्थ नष्ट हो जाये, लेकिन ईशोपनिषद् का उपर्युक्त मन्त्र यदि शेष रह जाये तो हिन्दू धर्म को कोई हानि नहीं हो सकती है। गांधी का उपर्युक्त विचार अतिशयोक्तिपूर्ण है और कुछ हद तक यह अनुचित भी प्रतीत होता है। फिर इतना तो स्पष्ट है कि गांधी जी के विचार में उस मंत्र का विशेष महत्व है ।
गांधी जी ने उपनिषदों द्वारा दी गयी इन्द्रिय निग्रह एवं आत्म त्याग की शिक्षा को भी विशेष दिया है। और उन्होंने इसे मानव जीवन के लिए आवश्यक माना है। त्याग के सम्बन्ध में गांधी जी ने लिखा है कि ष्त्याग सम्बन्धी कर्तव्य ही मनुष्य को पशु से पृथक करता है । परन्तु यहाँ त्याग का अर्थ संसार को छोड़कर वन मे चले जाना नहीं है। जीवन के समस्त कर्मों में त्याग की भावना व्याप्त रहनी चाहिए । भोगेच्छाओं में लिप्त रहने से मनुष्य का विनाश होता है। और त्याग से उसे अमरत्व की प्राप्ति होती है । अतः स्पष्ट है कि यह त्याग की भावना ही मनुष्य को पशु से अलग करती है और हमेशा सुख–भोगों में लिप्त रहने से मनुष्य का कल्याण सम्भव नहीं है। क्योंकि ये भोगेच्छायें उसे स्वार्थ व विनाश की ओर ले जायेगी । इसीलिए उसे त्यागमय जीवन व्यतीत करना चाहिए। लेकिन गांधी जी ने यह भी स्पष्ट किया है कि त्याग का अर्थ यह नहीं है कि समस्त कर्मो तथा

संसार का त्याग कर देना, अपितु केवल स्वार्थ पूर्ण इच्छाओं का त्याग करना ही है ।

अतः मनुष्य के नैतिक तथा आध्यात्मिक उत्थान के लिए उपनिषदों ने आत्म संयम तथा त्याग को जो महत्व प्रदान किया है, उसके अनुसार आचरण करना गांधी जी बहुत आवश्यक मानते थे। और गांधी जी स्वयं आजीवन हर सम्भव आत्मसंयम तथा त्याग का पालन करने की कोशिश करते रहे। इसी तरह गांधी जी ने जो ईश्वर, जगत, तथा आत्मा, आदि पर जो अपने विचार व्यक्त किये हैं, उन विचारों पर भी उपनिषदों का प्रभाव देखा जाता है। इस प्रकार अन्ततः कहा जा सकता है कि गांधी जी पर उपनिषदों का काफी प्रभाव पड़ा है।

गीता का प्रभाव

गांधी जी जिन धार्मिक ग्रन्थों से प्रभावित हुए, उनमें गीता का संभवतः प्रथम स्थान है। उनके जीवन को गीता के कर्म के संदेश ने जीवन भर अनुप्रेरित किया। गीता के प्रति गांधी जी अखंड श्रद्धा रखते थे । और उसे तत्वमीमांसा के ज्ञान का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ मानते थे। गांधी जी का गीता से प्रथम परिचय 1889 में हुआ जब वे इंग्लैंड में थे। इस सन्दर्भ में उन्होंने स्वयं लिखा हैं कि विलायत में ही मेरी मुलाकात दो थियोसाफिस्ट मित्रों से हुई । दोनों सगे भाई थे और अविवाहित थे। उन्होंने मुझसे गीता की बात चलाई। उन दिनों ये एडविन आरनॉल्ड कृत गीता के अंग्रेजी अनुवाद को पढ़ रहे थे, पर मुझे उन्होंने अपने साथ संस्कृत में गीता पढ़ने के लिए कहा। मैं लज्जित हुआ, क्योंकि मैंने तो गीता न संस्कृत में, न मातृ–भाषा में ही पढ़ी थी। मुझे उनसे यह बात झेपते हुए कहनी पड़ी, पर साथ ही यह भी कहा कि मैं आपके साथ पढ़ने के लिए तैयार हूँ । यों तो मेरा संस्कृत – ज्ञान नहीं के बराबर है, फिर भी मैं इतना समझ सकूँगा कि अनुवाद कहीं गड़बड़ होगा तो वह बता सकूं। इस तरह इन भाइयों के साथ मेरा गीता वाचन आरम्भ हुआ। दूसरे अध्याय के अंतिम श्लोकों में–

ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते ।
सगात्संजायते कामः कामात्क्रोधो ऽभिजायते ।।
क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृति भ्रंशात् बुद्धिनाशों बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ।।

अर्थात – विषयों का चिन्तन करने वाले पुरूष को उन विषयों में आसक्ति पैदा होती हैं। फिर आसक्ति से कामना पैदा होती है और कामना से क्रोध पैदा होता है। क्रोध से मूढ़ता पैदा होती है, मूढ़ता से स्मृति लोप होता है और स्मृति लोप से बुद्धि नष्ट होती है। और जिसकी बुद्धि नष्ट हो जाती है, उसका खुद का नाश हो जाता है।

गांधी जी इस श्लोक को पढ़कर काफी प्रभावित हुए और वे गीता का महत्व समझ सके । उन्होंने लिखा है कि "इन श्लोकों का मेरे दिल पर गहरा असर हुआ। बस कानों में उनकी ध्वनि दिन–रात गूँजा करती । तब मुझे प्रतीत हुआ कि भगवद्गीता तो अमूल्य ग्रन्थ है । यह धारणा दिन प्रति दिन अधिक दृढ़ होती गई और अब तो तत्वज्ञान के लिए मैं उसे सर्वोत्तम ग्रन्थ मानता हूँ। निराशा के समय इस ग्रन्थ ने मेरी अमूल्य सहायता की है। यों इसके लगभग तमाम अंग्रेजी अनुवाद मैं पढ़ गया हूँ परन्तु एडिवन आरनॉल्ड का अनुवाद सबमें श्रेष्ठ मालूम होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि गांधी जी ने गीता से सम्बन्धित अनके ग्रन्थों का अध्ययन किया और इससे धीर–धीरे गीता के सिद्धान्तों में उनकी आस्था दृढ़ होती गयी। वे इससे इतना प्रभावित हुऐ कि उन्होंने प्रतिदिन गीता के अनेक श्लोकों का वाचन शुरू कर दिया । और आजीवन गीता के सिद्धान्तों के अनुरूप आचरण करने का प्रयास करने लगे। उन्होंने गीता को माता कहना शुरू कर दिया। प्रत्येक कठिनाई के समय उन्होंने गीता का आश्रय लिया और इससे उन्हें कभी निराश नहीं होना पड़ा । और उन्होंने गीता को हिन्दू धर्म का महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना। इस प्रकार गांधी जी दार्शनिक एवं नैतिक दृष्टि से गीता को महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना व इसे स्वयं अत्यधिक महत्व देते थे ।

अन्य विद्वानों की भाँति गांधी जी ने भी गीता के सम्बन्ध में अनासक्तियोग गीता–बोधश् श्गीता–माताद आदि अनेक पुस्तकें लिखी है। गीता के सम्बन्ध में अन्य विचारकों के विचारों से कुछ भिन्न, गांधी जी का विचार है। क्योंकि उन्होंने गीता को एक ऐतिहासिक ग्रन्थ न मानकर, रूपक अथवा प्रतीकात्मक ग्रन्थ माना है। उनका कथन है कि ष्पांडव तथा कौरव क्रमशः शुभ एवं अशुभ के प्रतीक हैं और गीता में वर्णित उनका युद्ध वास्तव में मानव की सद्प्रवृत्तियों तथा दुष्प्रवृत्तियों का संघर्ष है मनुष्य का शरीर ही कुरूक्षेत्र है और उसकी अंतः प्रवृत्तियों का संघर्ष कुरूक्षेत्र में होने वाला युद्ध है।

कृष्ण कर्तव्य मार्ग दिखाने वाली शक्ति तथा अर्जुन शुभाशुभ एवं कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा का प्रतीक है। गीता के सम्बन्ध में उपर्युक्त विचार को स्पष्ट युद्ध मनुष्य का आन्तरिक संघर्ष है। पांडव और करते हुए गांधी जी ने स्वयं लिखा है कि ष्यह कौरव मनुष्य की शुभ और अशुभ आन्तरिक शक्तियाँ है । यह युद्ध भगवान और शैतान में होने वाला युद्ध है जो मनुष्य के मन में चलता रहता है। यह दो परिवारों में होने वाले युद्ध का इतिहास नहीं है। अपितु यह मनुष्य की आध्यात्मिक शक्ति का इतिहास है। स्पष्ट है कि गांधी जी के विचार से गीता में जिस युद्ध का वर्णन किया गया है, वह तो सिर्फ वाह्य युद्ध नहीं, बल्कि मानव की आंतरिक प्रवृत्तियों का शाश्वत संघर्ष है। किन्तु कई विद्वान इस प्रतीकात्मक व्याख्या को उचित नहीं मानते, क्योंकि यह उपलब्ध ऐतिहासिक तथ्यों के विरूद्ध है ।

गांधी जी ने गीता की उपर्युक्त प्रतीकात्मक व्याख्या, शायद यह प्रमाणित करने के लिए की है कि गीता अहिंसा की शिक्षा देती है, हिंसा या युद्ध की नहीं । इसीलिए उन्होंने वाह्य भौतिक युद्ध को अस्वीकार करते हुए उसे आन्तरिक प्रवृत्तियों के संघर्ष का प्रतीक माना है। ऐतिहासिक दृष्टि से गीता के सम्बन्ध में गांधी जी का यह विचार उचित हो या नहीं, किन्तु गांधी जी का यह दृढ़ विश्वास था कि गीता की मुख्य शिक्षा हिंसा नहीं, बल्कि अहिंसा ही हैं। गीता के सम्बन्ध में अपने इसी विचार को स्पष्ट करते हुए गांधी जी ने लिखा भी है कि ष्गीता के दूसरे अध्याय में जिस विषय का प्रारम्भ किया गया है। और इसके अन्तिम अध्याय में जिसका सारांश प्रस्तुत किया गया है।

उससे यह भली भाँति स्पष्ट हो जाता है कि गीता का मुख्य उपदेश हिंसा नहीं प्रत्युत अहिंसा ही है। यह कहना है कि गीता हिंसा की शिक्षा देती है और युद्ध को उचित मानती है, क्योंकि इसमें विशेष अवसर पर लोगों की हत्या करने के लिए कहा गया है, यह उसी प्रकार गलत है जिस प्रकार यह कहना कि हिंसा ही जीवन का नियम है, क्योंकि दैनिक जीवन में कुछ सीमा तक हिंसा अनिवार्य है । अतः कहा जा सकता है कि गांधी जी इस सामान्य मत को स्वीकार नहीं करते थे कि गीता मनुष्य को हिंसा अथवा युद्ध की शिक्षा देती है ।

गीता में पूर्ण संन्यास अथवा कर्म त्याग की शिक्षा दी गयी है, गांधी जी इस मत उचित नहीं मानते थे । बल्कि गांधी जी इस विचार से सहमत है कि गीता मानव को कर्म त्याग की नहीं, अपितु कर्मफलासक्ति के त्याग की शिक्षा देती है। गीता के दूसरे और अट्ठारहवें अध्याय में गीता की आत्म–साक्षात्कार संबंधी शिक्षा का निचोड़, गांधी जी को 'अनासक्तियोगश् या निष्काम कर्मयोग का आदर्श के रूप में प्राप्त हुआ । परन्तु फलत्याग का अर्थ परिणाम के प्रति उदासीनता किसी भी प्रकार से नहीं है।, बल्कि प्रत्येक कर्म के सम्बन्ध में मनुष्य को आनेवाले परिणाम को, उस कार्य के साधनों को और उसके करने की क्षमता को अवश्य जानना चाहिए। जो मनुष्य इस प्रकार सक्षम होता है, जिसमें

परिणाम की इच्छा नहीं है। और जो अपने सामने आये हुए कार्य को उचित रूप से पूरा करने के लिए पूर्णतया लगा हुआ है, उसके विषय में ही कहा जाता है कि उसने इच्छा का त्याग किया, गांधी जी के अनुसार गीता की यह मूलभूत शिक्षा इसके विरूद्ध है कि मुक्ति और सांसारिक कर्मो के बीच कोई सीमा रेखा खींची जाय। इस शिक्षा में यह अन्तर्निहित है कि हमारे सांसारिक कर्मों पर धर्म का शासन अवश्य होना चाहिए तथा उसको धर्म नहीं कहा जा सकता जिसका पालन नित्य प्रति के व्यवहार में न हो सका हो।ष् निस्स्वार्थ अनासक्ति का परिणाम उत्कृष्टतम् सत्य और अहिंसा होना चाहिए। इसके विपरीत अनासक्ति की इस चरम स्थित की पूर्ण सिद्धि अहिंसा के व्यवहार के बिना नहीं हो सकती। गीता के इस धर्म नीति से गांधी जी बहुत अधिक प्रभावित हुए।

गांधी जी गीता के इस मत को भी स्वीकार करते हैं कि मनुष्य के लिए सभी कर्मों का त्याग असम्भव है। क्योंकि त्रिगुणमयी प्रकृति द्वारा निरन्तर प्रेरित किये जाने के कारण वह एक क्षण भी निष्क्रिय नहीं रह सकता। इसी कारण गीता में कर्मफलासक्ति के त्याग की शिक्षा दी गयी है, न कि कर्मों के त्याग की । किन्तु गांधी जी के अनुसार फलासक्ति के त्याग का यह अर्थ नहीं है कि मनुष्य को कोई कार्य करने से पूर्व उसके परिणाम के सम्बन्ध में जानना ही नहीं चाहिए। बल्कि इसका अर्थ सिर्फ इतना है कि मनुष्य अपने समस्त कर्म ईश्वर को समर्पित कर दे और स्वयं फल के सम्बन्ध में चिंतित न रहे। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गांधी जी के अनुसार गीता का मूल मंतव्य अनासक्ति का संदेश है, न कि संन्यास अथवा कर्म त्याग का और शायद अपने इसी मत की पुष्टि के लिए ही गांधी जी ने गीता के विषय में अनाक्तियोग नामक पुस्तक लिखी ।

गीता के जीव मात्र की एकरूपता के आदर्श ने गांधी जी के मन में अहिंसा को जन्म दिया। गीता के अपरिग्रह और समभाव शब्द ने उन्हें भौतिक वस्तुओं के परित्याग से अनुप्रेरित किया । परिणाम स्वरूप धन, सम्पत्ति, और विषयासक्त से छुटकारा पाया। फल में आसक्त हुए बिना काम करना, के समभाव को अपना कर उन्होंने भ्रष्ट और उदण्ड अधिकारियों के साथ भी सदैव भलाई ही की तथा सहकर्मीयों के साथ अपूर्व सद्भाव और स्नेह का परिचय दिया। गीता से उन्होंने तर्क और न्याय को ग्रहण किया, यही कारण है कि गांधी जी ने अमानवीय और अन्यायपूर्ण प्रथाओं का कभी समर्थन नहीं किया ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि गांधी जी कर्मवादी दृष्टिकोण का समर्थन करते है और गीता का मुख्य उद्देश्य मनुष्य को निष्काम कर्मयोग अथवा अनासक्तियोग की शिक्षा देना है। गीता गांधी जी के लिए परवर्ती जीवन में प्रेरणा का स्रोत और संकट में सच्चा मित्र और सहायक थी। गांधी जी का सम्पूर्ण जीवन और आदर्श सदैव ही गीता के प्रभाव से प्रभावित रहा। गीता के प्रत्येक सिद्धान्त को वे बड़ी लगन और श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। और गांधी जी के विचारों पर भी गीता का सर्वत्र और स्पष्ट प्रभाव रहा है।

रामायण और महाभारत का प्रभाव

उपनिषदों तथा गीता की ही तरह रामायण और महाभारत का भी, गांधी जी के विचारों पर काफी प्रभाव पड़ा है। गांधी जी इन दोनों महाकाव्यों को हिन्दू धर्म का महत्वपूर्ण ग्रन्थ मानते थे । और इनके प्रति भी वे अखंड श्रद्धा रखते थे । रामायण, गांधी जी बचपन से ही पढ़ा और सुनां करते । और इसका उनके मन पर गहरा असर पड़ा था। इसी को स्पष्ट करते हुए गांधी जी ने लिखा है कि जिस चीज का मेरे मन पर गहरा असर पड़ा, वह था रामायण का पारायण । पिताजी की बीमारी का थोड़ा समय पोरबन्दर में बीता था । वहाँ वे राम जी के मन्दिर में रोज रात के समय रामायण सुनते थे । सुनाने वाले बीलेश्वर के लाधा महाराज नामक एक पंडित थे। वे रामचन्द्र जी के परम भक्त थे ।.लाधा महाराज का कंठ मीठा था । वे दोहा – चौपाई गाते और अर्थ समझाते थे। उस समय मेरी उम्र तेरह साल की रही होगी, पर याद पड़ता है कि उनके पाठ में मुझे खूब रस आता था । यह रामायण – श्रवण रामायण के प्रति मेरे अत्यधिक प्रेम की बुनियाद है। आज मैं तुलसीदास की रामायण को भक्ति मार्ग का सर्वोत्तम ग्रन्थ मानता हूँ ।स्पष्ट है कि गांधी जी रामायण के भक्तिपूर्ण विचारों तथा मानवीय सम्बन्धों के उच्च आदर्शों से काफी प्रभावित थे। आगे चलकर रामनाम में उनकी जो अटूट श्रद्धा उपन्न हुई, उसका मुख्य कारण रामायण का यह प्रभाव ही है। और काव्यमय कथानकों द्वारा साधारण मनुष्यों के भी समझने और ग्रहण करने योग्य प्रकार से भक्ति, ज्ञान वैराग्य आदि के निरूपण के लिए, गांधी जी तुलसीकृत रामायण को ही हिन्दुओं को श्रेष्ठ ग्रन्थ मानते थे। क्योंकि उनका यह भी मानना था कि रामायण ने लाखों हिन्दुओं को शान्ति, संतोष तथा आनन्द प्रदान किया है। और उनमें ईश्वर के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति उत्पन्न की है।

रामायण की तरह गांधी जी महाभारत को भी धार्मिक एवं नैतिक दृष्टि से एक उत्कृष्ट ग्रन्थ मानते थे। गांधी जी का विचार है कि महाभारत मनुष्य को हिंसा तथा युद्ध का त्याग करने की शिक्षा देता है। महाभारत के रचियता वेदव्यास ने महाभारत के युद्ध द्वारा व्यापक विनाश दिखा कर, युद्ध की निरर्थकता ही सिद्ध की है। महाभारतकार ने उसे इस कथानक द्वारा एक अमर काव्य के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत किया है कि हमारे हृदयों में जो दिन–रात सत् और असत् के बीच सनातन संघर्ष चल रहा है, उसमें अन्त में तो सत्य ही की विजय होती है, तो भी असत् किस तरह सशक्त होकर अत्यन्त विवेक शील पुरूषको भी श्किंकर्तव्य विमूढ़श् बना देता है। महाभारत सदाचार का एक मात्र मार्ग भी हमें बताता है ।

गीता की ही तरह, गांधी जी रामायण और महाभारत को भी ऐतिहासिक ग्रन्थ नहीं मानते है ।वे इसे भी रूपक अथवा प्रतीकात्मक ग्रन्थ मानते हैं । इन दोनों ग्रन्थों के बारे में अपने इस विचार को स्पष्ट करते हुए गांधी जी ने स्वयं लिखा है कि रामायण तथा महाभारत जिन्हें करोड़ों हिन्दू अपने मार्ग दर्शक मानते हैं। निस्सन्देह रूपक अथवा प्रतीकात्मक महाकाव्य है जैसा कि उनमें उपलब्ध प्रमाणों से स्पष्ट है।.....प्रत्येक महाकाव्य उस महान संघर्ष का वर्णन करता है जो अधंकार और प्रकाश में निरंतर चलता रहता है। लेकिन इतना तो स्पष्ट है कि गांधी जी इन दोनों ग्रन्थों को एतिहासिक ग्रन्थ न मानते हुए भी, इनको नैतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण मानते थे ।

गांधी जी का विचार है कि चरित्र के विकास व उन्नति के लिए रामायण द्वारा प्रतिपादित उच्च आदर्श सभी मनुष्यों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है । ये आदर्श हैं– सेवा, त्याग की भावना, विनयशीलता, आज्ञाकारिता, भ्रातृत्व, परोपकार और दया, इत्यादि। गांधी जी के अनुसार, इन सभी उच्च आदर्शो के अनुरूप ही सभी मनुष्यों को आचरण करना चाहिए। और इसके अनुरूप आचरण गांधी जी बहुत आवश्यक मानते थे। इसी प्रकार गांधी जी मनुष्य के नैतिक उत्थान के लिए महाभारत के रचियता व्यास के निम्नलिखित वचनों का व्यावहारिक जीवन में पालन करना भी आवश्यक मानते थे–

श्रूयतां धर्म सर्वस्वं श्रुत्वा चौवावधार्यताम |
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां मा समाचरेत् ।।'

अर्थात धर्म का यह रहस्य या सर्वस्व सुनों और सुनकर हृदय में धारण कर लो, जो कुद तुम्हारे प्रतिकूल है– अर्थात जिससे तुम्हें दुःख होता हैं वह दूसरों के प्रति न करो ।

'परोपकारः पुणाय पापाय पर पीड़नम।'

अर्थात, परोपकार से पुण्य तथा परपीड़न से पाप होता है ।

'धर्मादर्थश्च कामश्चः स धर्मः किं न सेंत्यते ।'

अर्थात, जिस धर्म से अर्थ और काम दोनों की प्राप्ति होती है, उसका पालन क्यों नहीं किया जाता – अर्थात अवश्य किया जाना चाहिए।" 20 इसी प्रकार गांधी जी महाभारत के अन्य कई ऐसे उपदेशों को भी नैतिक आचरण का दृष्टि से बहुत आवश्यक मानते थे। और गांधी जी स्वयं आजीवन ऐसे नैतिक आचरणों के अनुरूप व्यवहार करने की कोशिश करते थे तथा सभी मनुष्यों को भी ऐसा आचरण करने की सलाह देते थे और इसे बहुत आवश्यक मानते थे ।

अन्ततः उपर्युक्त सम्पूर्ण विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि गांधी जी के नैतिक विचारों के निर्माण एवं विकास में पारिवारिक तथा सामाजिक वातावरण के अलावा उपनिषदों, गीता, रामायण और महाभारत में प्रतिपादित सिद्धान्तों एवं उच्च आदर्शो का विशेष योगदान रहा है

भारतीय दर्शनों का प्रभाव

पारिवारिक तथा सामाजिक वातावरण और हिन्दू धर्म ग्रन्थों के अतिरिक्त गांधी जी के नैतिक विचारों के निर्माण एवं विकास में योग, वेदान्त, बौद्ध, जैन आदि दर्शनों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है । किन्तु यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि गांधी जी के नैतिक विचारों पर भारतीय दर्शनों का प्रभाव सिर्फ उनके तत्वमीमांसात्मक यानि ईश्वर, आत्मा, जगत आदि संबंधी विचारों पर ही पड़ा है। गांधी जी ने ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए कई परम्परागत तर्को को प्रस्तुत किया है।

उनके द्वारा कई तर्कों को प्रस्तुत करने से यह कहना कठिन हो जाता है कि ईश्वर के अस्तित्व और स्वरूप के सम्बन्ध में गांधी जी का निश्चित मत क्या है ? गांधी जी ने ईश्वर के अस्तित्व के प्रमाण के लिए, विश्वमूलक युक्ति, कारण मूलक युक्ति, प्रयोजन मूलक युक्ति, शब्द प्रमाण युक्ति, इत्यादि, विभिन्न दार्शनिक प्रमाणों को प्रस्तुत किया है । इन सभी तर्कों के निष्कर्ष एक ही है कि ईश्वर है। और उन्होंने लिखा हैं कि मैं स्पष्पतः देखता हूँ कि जहाँ मेरे चारों तरफ प्रत्येक वस्तु सदा परिवर्तनशील है, सदा मर्त्य है, वहाँ उस सकल परिवर्तन के अंतराल में एक जीती जागती शक्ति है जो बदलती नहीं, जो सबकों एक साथ पकड़े हुए है, जो रचना करती है। विनाश करती है, और पुनः निर्माण करती है। वह सर्वातर निर्मात्री शक्ति या आत्मा, ईश्वर है । यद्यपि गांधी जी ने ईश्वर के अस्तित्व को प्रमाणित करने के लिए कई तर्कों का सहारा लिया है, लेकिन वे इस सत्य से भली भाँति परिचित थे कि तर्कबुद्धि द्वारा कभी भी ईश्वर के अस्तित्व को प्रमाणित नहीं किया जा सकता। बल्कि गांधी जी कॉट के इस विचार से सहमत थे कि ईश्वर को सिद्ध करने के लिए बौद्धिक युक्तियों की नहीं प्रत्युत आस्था एवं श्रद्धा की भूमिका ज्यादा महत्व पूर्ण होती है।

इसी कारण उन्होंने ईश्वर को तर्क एवं बुद्धि से परे मानते हुए, आस्था एवं श्रद्धा के आधार पर उसकी सत्ता को अनिवार्य मानते हुए, यह कहा है कि "बुद्धि ईश्वर को जानने में असमर्थ है। वह बुद्धि की पहुँच के बाहर है। श्रद्धा इस प्रसंग में आवश्यक हैं मेरा तर्क अगणित प्रमेय बना और बिगाड़ सकता है, कोइ अनिश्वरवादी मुझे बाद विवाद में परास्त कर सकता है। किन्तु मेरी श्रद्धा, मेरी बुद्धि की अपेक्षा तीव्रतर है ओर इस कारण मैं सकल संसार को ललकार कर कह सकता हूँ कि ईश्वर है, ईश्वर था, और ईश्वर सदा रहेगा।अतः स्पष्ट है कि ईश्वर के प्रति गांधी जी की यह श्रद्धा और आस्था ही उनके लिए ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण एवं दृढ़तम आधार है ।

इसी प्रकार ईश्वर के स्वरूप के बारे में गांधी जी का कहना है कि वह कोई वस्तु या व्यक्ति नहीं है, बल्कि वह एक अजर, अमर निर्गुण एवं निराकार शक्ति है। इसीलिए वह मनुष्य की तर्क बुद्धि से परे है। और इसी कारण ईश्वर को वेदों और उपनिषदों में 'नेति नेतिश् कहा गया है । ईश्वर सभी भेदों से रहित है। गांधी जी ने ब्रह्म का वर्णन करते हुए लिखा है कि "वह एक और अद्वितीय है, वहीं अकेला ब्रह्म या वृहन्त है वह कालातीत, निराकार एवं निष्कलंक है। इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि गांधी जी ने भी ब्रह्म का वही स्वरूप एवं लक्षण स्वीकार किया है, जिसका प्रतिपादन उपनिषदों तथा शंकराचार्य ने किया है। वस्तुतः शंकराचार्य, सजातीय, विजातीय तथा स्वगत भेद से रहित अद्वितीय, निर्गुण एवं निराकार ब्रह्म में विश्वास करते हैं । और गांधी जी ने ऐसे ही ब्रह्म का समर्थन किया है।

लेकिन इससे यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि गांधी जी ईश्वर को सगुण एवं साकार नहीं मानते, उनका मानना था कि निर्गुण तथ निराकार ब्रह्म का ध्यान करना अत्यन्त कठिन है, इसलिए सामान्य मनुष्य सगुण और साकार ईश्वर की ही उपासना कर सकता है। और यही एक ईश्वर उपासन का सरल मार्ग है। गांधी जी के विचार में सगुण एवं साकार ईश्वर, निर्गुण तथा निराकार ब्रह्म का व्यावहारिक रूप है और यहाँ गांधी जी पर अद्वैत वेदान्त का स्पष्ट प्रभाव दिखलाई पड़ता है। साथ ही गांधी जी ने ईश्वर को परम शुभ माना है तथा सत्य व प्रेम का प्रतीक माना है। और समस्त नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्य को ईश्वर में ही निहित माना है ।

इसी प्रकार ईश्वर की तरह ही आत्मा, जीव, जगत सम्बन्धी गांधी जी के विचारों पर भी उपनिषदों तथा अद्वैत वेदान्त का प्रभाव परिलक्षित होता है। जैसे गांधी जी आत्मा के संबंध में उपनिषदों और अद्वैत वेदान्त के इस मत को स्वीकार करते हैं कि यद्यपि आत्मा जाग्रत, स्वप्न, और सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं का आधार है । और इनमें निहित रहता है, फिर भी वह इनसे परे, तुरीय रूप है। और यही उसकी अन्तिम तथा वास्तविक अवस्था है। इसी तरह गांधी जी उपनिषदों, गीता तथा अधिकतर भारतीय दर्शनों के इस मत को स्वीकार करते है कि आत्मा अजर, अमर, और नित्य होने के कारण शरीर के साथ नष्ट नहीं होता, वहीं सभी जीवों का मूल आधार है और उनमें पुष्प की गंध की भाँति व्यापत रहता है।

अद्वैत वाद में विश्वास करने के कारण गांधी जी यह मानते थे कि सभी प्राणियों में एक ही आत्मा की सत्ता विद्यमान है, अतः उनमें किसी प्रकार का तात्विक भेद न होने के कारण वाह्य दृष्टि से प्रतीत होने वाला. अनेकत्व अथवा नानात्व वास्तव में मिथ्या है। गांधी जी ने अपने इसी विचार को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि मैं अद्वैत वाद के बुनियादी सिद्धान्त में विश्वास करता हूँ और अद्वैत की मेरी व्याख्या उच्चता के किसी भी अर्थ का पूणतया बहिष्कार करती है। मेरा अटल विश्वास है कि सभी मनुष्य जन्मना समान है।

ईश्वर तथा आत्मा की तरह ही जगत के सम्बन्ध में भी गांधी जी के विचार शंकराचार्य के विचार के समान ही है। क्योंकि तात्विक अथवा पारमार्थिक दृष्टि से शंकराचार्य की भाँति गांधी जी भी जगत को मिथ्या अथवा भ्रम ही मानते थे गांधी जी जगत को अनित्य और परिवर्तनशील मानते हैं । किन्तु इस जगत का मूल कारण ईश्वर नित्य एवं शाश्वत हैं । लेकिन गांधी जी तात्विक दृष्टिकोण से जगत को प्रतिभास ही मानते हैं। गांधी जी ने जगत के सम्बन्ध में शंकराचार्य की निम्नलिखित पंक्तियों को स्वीकार किया है। यस्मित्रिदं जगदशेषमशेषमूतों, रज्ज्वा भुजंगम इव प्रतिभाति सर्वे ।श् अर्थात सम्पूर्ण आत्मा में यह सम्पूर्ण जगत उसी प्रकार प्रतिभासित होता है। जिस प्रकार रस्सी में सांप। अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि गांधी जी के ईश्वर, आत्मा, जगत, सम्बन्धी विचारों पर शंकराचार्य के अद्वैत वाद का काफी

प्रभाव पड़ा है। इसलिए कहा जा सकता है कि गांधी जी के तत्वमीमांसक विचारों पर अद्वैत – वेद्धान्त का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है।

इसी प्रकार गांधी जी उपनिषदों तथा अधिकतर भारतीय दर्शनों द्वारा प्रतिपादित कर्मवाद और पुनर्जन्म में पूर्ण रूप से अपना विश्वास जताया है। इसी तरह गांधी जी ने जैन व बौद्ध दर्शनों की अहिंसा, दया, प्रेम, तथा करूणा को भी अपने नैतिक दर्शन का आधार बनाया है। बौद्ध और जैन दर्शन से प्रभावित होने के कारण ही गांधी जी ने अहिंसा और करूणा को अपने जीवन में विशेष महत्व दिया है। गांधी जी मीमांसा के कर्म मार्ग को भी स्वीकार करते हैं। लेकिन गांधी जी सुख प्राप्ति के लिए किये कर्म को महत्व न देकर, परोपकार के लिए किये गये कर्म को अधिक महत्व देते है। गांधी जी के नैतिक दर्शन में योग दर्शन का भी महत्वपूर्ण योगदान है। क्योंकि अहिंसा, सत्य, आदि पंच महाव्रत को गांधी जी ने योग दर्शन से ही ग्रहण किया है । चुँकि गांधी जी के नैतिक दर्शन में अहिंसा व सत्य आदि का विशेष महत्व है, इसलिए कहा जा सकता है कि योग दर्शन, गांधी जी के नैतिक दर्शन का मूल आधार है।

गांधी जी के तत्वमीमांसात्मक विषयों – ईश्वर, आत्मा जीव, जगत, पुनर्जन्म, इत्यादि तथा अहिंसा व सत्य आदि महाव्रतों का जो विचर है व उनके नैतिक दर्शन पर जो प्रभाव पड़ा है, उसका यहाँ सक्षिप्त विवरण दिया गया है। लेकिन इन पर गांधी जी का विस्तृत दृष्टिकोण है।

निष्कर्ष

गाँधीजी धार्मिक व्यक्ति होने के कारण उन्होंने अपने जीवन में धर्म का निर्वाह किया, उस आधार पर उन्हें भारतीय परम्परा का एक महान् सन्त कहा जा सकता है।गांधी जी के चिंतन और व्यवहार पर पारिवारिक वातावरण तथा सामाजिक वातावरण और हिन्दू धर्मग्रन्थों के साथ ही साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से तत्कालीन भारतीय राजनीति के प्रमुख चिन्तकों का भी प्रभाव पड़ा हैं। अन्ततः सम्पूर्ण विवेचन से यह स्पष्ट हो चुका है कि गांधी जी के नैतिक दर्शन का निर्माण एवं विकास कैसे हुआ। और यह भी स्पष्ट है हो चुका कि उन पर पारिवारिक वातावरण तथा सामाजिक वातावरण, भारतीय धर्म दर्शन एवं भारतीय दर्शन के ग्रन्थों तथा चिन्तकों का क्या प्रभाव पड़ा। परन्तु गांधी जी केवल भारतीय चिन्तकों द्वारा ही प्रभावित नहीं हुए, बल्कि उन पर पाश्चात्य धर्म दर्शन व चिन्तकों का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मेहता, उदय। (2010)। लोकतंत्र, राजनीति और रोजमर्रा की जिंदगी की नैतिकता पर गांधी। आधुनिक बौद्धिक इतिहास. 7.355.371.
2. श्रीवास्तव, प्रेम. (2014)। गांधीवादी दर्शन में आध्यात्मिक शिक्षा। एचएसईएल के लिए एसएचजे। 1.438.48.
3. अलेक्जेंडर, वैन्सेलस और मगाजी, इब्राहिम। (2021)। महात्मा गांधी का राजनीतिक दर्शन और नाइजीरिया में सुशासन। 4. 168.181.
4. जयसवाल, अजीत और जयसवाल, सपना। (2021)। महात्मा गांधी और राजनीति और धर्म पर उनका दृष्टिकोण।
5. देवजी, फैसल। (2012)। असंभव भारतीय: गांधी और हिंसा का प्रलोभन। 10.4159/हार्वर्ड. 9780674068100।
6. झा, सुशांत. (2021)। गांधीजी को महानगरीय परंपरा में स्थापित करना।
7. कुमार, सुनील. (2023)। गेम थ्योरी विश्लेषण का उपयोग करते हुए महात्मा गांधी की ट्रस्टीशिप का एक महत्वपूर्ण तर्क।
8. हज़ामा, इजिरो। (2022)। गांधी की अंतरात्मा/अंतरात्मा की अवधारणा पर दोबारा गौर किया गया: त्रिभाषी ग्रंथों में उनके कार्डिनल सिद्धांत की खोज। हिंदू अध्ययन के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल.
9. रघुरामराजू, अदलुरु। (2007)। सावरकर और गांधी: धर्म के राजनीतिकरण से राजनीति के आध्यात्मिकीकरण तक।
10. शिमराह, खारिंग्यो। (2015)। एम.के. की आलोचना गांधी की राजनीति. 1.2.
11. गोविंद, माधव. (2009)। गोविंद, माधव (2009)। विज्ञान, सत्य और गांधी: विचलन और अभिसरण। गांधी मार्ग: गांधी शांति प्रतिष्ठान का त्रैमासिक जर्नल, 31(1), पृष्ठ 57.42.गांधी मार्ग।
12. गांधी, एम.के., हरिजन, 2.7.46
13. पांडे उपासना (2010) उत्तर आधुनिकतावाद और गांधी, नई दिल्ली: रावत प्रकाशन, पृष्ठ 204।
14. गांधी, एम.के. युवा भारत, 31.12.1931.
15. प्रभु, आर.के. और राव, यू. आर (कॉम्प. और संपादित) (1967) द माइंड ऑफ महात्मा गांधी, अहमदाबाद: नवजीवन पब्लिशिंग हाउस.पी.43.
16. गांधी, एम.के. यंग इंडिया, 12.5.20.
17. गांधी.एम.के. यंग इंडिया, 12.3.25.
18. चौधरी रामानंद (2007) ष्गांधी का राजनीति पर दृष्टिकोणष्, गांधी मार्ग, खंड 29, अंक 2 जुलाई–सितंबर, पृ.216
19. गांधी, एम.के., (1994) सत्य के साथ मेरे प्रयोग की कहानी, अहमदाबाद: नवजीवन प्रकाशन गृह.पृ.383.
20. गांधी, एम.के., हरिजन, 2.3.1934. गनी.एच.ए. (1998)
21. राजनीतिक दल और लोकतांत्रिक और नैतिक मूल्यों का पतन, रेडिकल ह्यूमनिस्ट, खंड, 62, संख्या 2, मई, पृ.28.
22. गांधी, एम.के., यंग इंडिया, 3.4.1924, पृ.112.
23. गाँधी, एम.के., हिन्दू धर्म नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1950
24. गाँधी, एम.के., हिन्द स्वराज और इण्डियन होम रूल, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद,